Botschaft 259

Indien, 6. Mai 2013

(Dies ist eine Botschaft von einem glühenden Devotee in Hindi-Sprache. Die englische Übersetzung von Gopi Menon ist die Message 260 und die deutsche Übersetzung ist die Botschaft 260)

सद्‌गुरु के सारे उद्‌बोधन कल्याणार्थ होते हैं बशर्ते उसे समझदारी और समर्पण की पृष्ठभूमि पर मानव शरीर धारण कर सके। लेकिन देखने को यह मिलता है कि कोई गुरु-वाक्य के शब्दार्थ में, तो कोई उसके भावार्थ में, और कोई-कोई उसके परमार्थ में गोता लगाता है। कदाचित गुरु-शरीर के उद्‌बोधन के प्रवाह में उनका यही आशीर्वाद रहता है कि संदेश में छिपे सारगर्भित परमार्थ का स्पर्श सब को मिले, लेकिन भूमि का गुण-धर्म एक ही बीज से उत्पन्न वृक्ष के फल में भेद दर्शाता है, गुरु-शरीर किसी से कुछ कहता नहीं, यह तो शीतल निर्झर की तरह अनवरत प्रवाहमान रहता है । इस दिव्य निर्झर में डूब कर कौन कितना अभिसिंचित होकर धन्य हो सकता है यह उस व्यक्ति पर ही निर्भर करता है ।

पदार्थ है मन, जबकि जीवन है चेतन । जब तक "मैं" और उसमें सन्निहित "मैं-पना" है, तब तक मन अपने अनवरत विचरण में अंतहीन है और जहाँ मन का विचरण है, वहाँ आचरण कहाँ, जागरण कहाँ , निर्मन का अवतरण कहाँ, जीवन कहाँ ! वहाँ तो कुछ और होने की, कुछ और पाने की अंतहीन दौड़ है । यह कैसी विडम्बना है कि गुरु-शरीर के सान्निध्य में रहने वाले शिष्य जिसे इस उद्‌गार को सुनते रहने का सौभाग्य प्राप्त होता है लेकिन इसके बावजूद उनके आचरण में इसका स्पर्श नहीं देखा जाता, कदाचित उनके शरीर में सुनने की जगह चुनने की प्रक्रिया चलती रहती है।

हाल ही के दिनों में एक शिष्य ने अपने जीवन से जुड़े संघर्ष और उतार-चढाव से ग्रसित हो अपनी विपदा को गुरु-शरीर से अवगत कराया और आशा भरी दृष्टि से देखता रहा क्योंकि उसे पता था कि गुरु-शरीर यह उद्‌गार भी व्यक्त करता है कि यहाँ कोई आशा नहीं है लेकिन यह आशा-विहीन अवस्था भी नहीं है । अतः उसने अपनी व्यथा कह डाली "गुरुदेव मैं जहाँ रोजी-रोटी के लिये नौकरी करता हूँ वहाँ सम्भावना है कि कहीं मुझे नौकरी से निकाल न दिया जाय और तब उस स्थिति में मेरे परिवार के भरण-पोषण का क्या होगा ? " उसकी बात सुनते ही गुरु-शरीर से तत्क्षण विस्फोट हुआ " **अरे निकल जायेंगे तुझे निकालने वाले** " और कालांतर में पाया गया कि उसके उच्च पदाधिकारी नौकरी से निकल गये और कार्यालय के कार्यभार को देखते हुए उसे नई जिम्मेदारियों के साथ उच्च पद पर आसीन कर दिया गया । समय बीतने के साथ गुरु-शरीर को इसकी जानकारी मिली, साथ ही यह भी पता चला कि वह अब भी व्यथित है क्योंकि पदोन्नति तो हुई, पर तनख्वाह नहीं बढी ।

एक मधुर कथा है एक व्यापारी अपने व्यापार में 10 लाख रुपये के डूब जाने की हानि से रोता रहता था परंतु उसकी वास्तविक स्थिति यह थी - कि उसे 5 लाख रुपये का लाभ हुआ था और इसके बावजूद उसकी पत्नी ने हंसकर कहा कि उसकी उम्मीद 15 लाख रुपये के लाभ की थी लेकिन लाभ हुआ सिर्फ 5 लाख । अत: उसे लग रहा था कि उसे 10 लाख रुपये की हानि हो गयी है । क्या जीवन लाभ-हानि का चौसर है? क्या इस बिसात पर कृपा, आशीर्वाद और जीवन-प्रवाह का कोई स्थान नहीं ? जो नहीं मिला उसका असंतोष बना रहता है । क्या मन के गलियारे में असंतोष से बाहर निकलना सम्भव है ? यह कदापि सम्भव नहीं है, क्योंकि असंतोष मन की ही उपज है और मन "मैं" के माध्यम से पनप कर अंतहीन दौड़ में लगा रहता है । ऐसे में, जो मिला, उसका धन्यवाद नहीं, जो नहीं मिला उसका रोना है । अगर इस अंतर्निहित सत्य का दर्शन हो सकता है तो शायद तब ही संतोष में जीने का आनंद-नर्तन हो सकता है ।

कुछ मर्मार्थ

1. **सुनन्दाजी :** आपका मतलब है कि बीस बर्षो से मैने आपको सुना ही नहीं ।
   कृष्णमूर्तिजी : इससे कोई फर्क नहीं पड़ता, सुनने के लिये एक दिन भी काफी है । आप तो केवल शब्द सुनती रही हैं और उसके साथ अपनी प्रतिक्रिया को भी साथ लिये चलती रही हैं । आपने तो कृष्ण को सुना ही नहीं है ।

2. अपने विचार-विकार की हर हरकत पर जागरुक रहना ही स्वाध्याय है । आईनस्टाईन का सूत्र है $E = mc^2$ अर्थात Energy, Mass और Velocity of light का समीकरण, लेकिन क्रियावानों के लिये इसका अर्थ है

Energy of Understanding	(ईश्वर प्रणिधान)
=	=
Method	(तापस अर्थात क्रिया अभ्यास)
X	X
$Contemplation^2$	(गहन स्वाध्याय)

3. क्या अवलोकन बिना अवलोकनकर्ता के, बिना स्मृति-भंडार के सम्भव है ! अगर यह सम्भव है तो यही स्वाध्याय की शुरुआत है और यही है सम्पूर्ण जागरुकता (Holistic Awareness) का या भगवत्ता का उन्मोचन- द्वार ।
4. अगर द्वंद्व को समझना है तो आपके अंतर्मन में चल रहे विचार-विकार के प्रवाह का जागरुकता पूर्वक दर्शन करने की प्रक्रिया में बने रहना होगा और इस काम में आपकी कोई मदद नहीं कर सकता । मनस्तत्वविद की बकवास भी कुछ नहीं कर सकती । इसके लिये आपमें असाधारण दृढ़ता और अखंड मजबूती की आवश्यकता है ।
5. इन पर गहराई से ध्यान दें :-

   मैं अपने लिये स्वयं प्रकाश हूँ , मेरा कोई मार्गदर्शक नहीं, मनस्तत्वविद नहीं, मैं गुरुओं के, आश्रमों के उत्पीड़न् में नहीं फसुंगा । जहाँ अपूर्णता है वहाँ भ्रष्टाचार है । इन लोगों से मैं कोई बर्ताव, कोई सरोकार नहीं रखूँगा । मैं शब्दजाल में नहीं फँसना चाहता, बल्कि तथ्य में रहना चाहता हूँ । तथ्य का अवलोकन होता है - पूरे ध्यान और स्नेह के साथ "जो है" के प्रति पूरी सजगता में रहने में । अतः मैं इसमें पूरे प्रेम के साथ ठहरुंगा ।
6. अगर कर्म, फल (परिणाम) के लिये किया जाता है, तो कर्ताभाव उभर आता है अतः सोच-विचार में गर फल की चिंता ना रहे तो वही चैतन्य-प्रवाह बन जाता है ।
7. विचार से क्रांति नहीं आती वल्कि केवल गतानुगतिक क्रम का क्षणिक हेर-फेर हो जाता है। निर्विचार जागरुक अवस्था ही परम तथा चरम क्रांति है - आमूल रुपान्तरण है ।
8. सरल संस्कृत परम पवित्र :-

   सनातनत्वं प्रतिक्षणमस्ति, सनातनत्वं अस्मिन् क्षणे अस्ति ।

   अयं क्षणः न गतकालस्य प्रतिबिम्बं, नापि गतकालस्य भविष्यकालं प्रति निरन्तरगमनं ॥
9. वैसा धर्म जो संगठित है - मिथ्या है,वह तो इंसान को इंसान से अलग करता है । वह सच को फँसा कर उलझा कर रखता है । उसमें झूठे प्रचार हैं, मजबूरी है, धर्म-परिवर्तन का धोखा है और इसके कारण हम एक-दूसरे को काटने-मारने पर तुले रहते हैं ।
10. कल्याणनिष्ठा, शीलनिष्ठा. सत्यनिष्ठा मुक्ति है और सत्य की खोज केवल मुक्त रह कर ही की जा सकती है । संगठित धर्मों में फँसे रहकर, उसके विश्वासों में कैद रहकर कभी भी सत्यनिष्ठा टिक नहीं सकती |
11. आदर्श गलत है, काल्पनिक है, वह हमें "मैं-पना" को समझने से रोकता है । मनुष्य तो वह है, जो विश्वास-पद्धतियाँ नहीं ढ़ोता, अपितु सब के प्रति प्रेम में होता है।

12. अज्ञान के कारणों के मिटे बिना, ज्ञानोदय नहीं हो सकता । जो गलत है और झूठ है उसे जभी देख लिया जाता है तभी जो सत्य है वह प्रकट हो जाता है, और फिर परम आनंद है - मद नहीं, नृत्य है - नेतृत्व नहीं, खुशी है - खुशामद नही ।

जय संतुष्टि

Jai Zufriedenheit